अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी एवं सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका
Peer Reviewed Refereed शोध पत्रिका
ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 7.789 Volume 14-Issue 01, (January-March 2026)

# संत काव्य परम्परा में संत रविदास का सामाजिक योगदान

**डॉ॰ हरि ओम फुलिया**
सह–आचार्य, हिन्दी–विभाग
आई॰आई॰एच॰एस॰, कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरुक्षेत्र

हिन्दी साहित्य में कबीर पर इतना कुछ लिखा जा चुका है फिर भी कबीर की वाणी से आलोकित भाव उर्मियां अनेक रंगतों में नये–नये प्रभाव छोड़ती हैं । आज विश्व की जो समग्र स्थिति है उसके रक्त रंतजि पृष्ठों पर से रक्त की छींटे पोंछने के लिये और रक्त के इस प्रकार को रोकने के लिये कबीर – साहित्य का पुनर्मूल्यांकन शोध की मांग करता है । कबीर की अपने–अपने ढंग से व्याख्या की गयी है परन्तु विज्ञान इस मत से सहमत हैं कि कबीर को अभी पूरी तरह से समझा नहीं गया है । शोध की अपनी दिशा और प्रक्रिया होती है । जिससे उस विषय के अतीत – वर्तमान और भविष्य को नयी नयी स्थापनाओं और खोजों को क्रमबद्ध किया जाता है । इस प्रक्रिया में कबीर वाणी को नये ढंग से खोज परख कर नयी स्थापनाओं के साथ बराबर विवेचित किया जाना आधुनिक सन्दर्भों में अनिवार्य हो गया है । कबीर केवल भक्त कवि थे या समाज सुधारक या महान – कवि या सबसे ऊपर एक मानववादी समाज शास्त्री ? हर स्थिति नये ढंग से प्रश्नों की अनुचित श्रृंखलां बनती जा रही है और शोधकर्त्ता भी बनी–बनायी एक लीक पर शोध ग्रंथ के पन्ने भरकर रचनात्मक दायित्व से हाथ झाड़ लेते हैं ।

"सम्बन्धों के बिना जीवन है क्या मीरा । जीवित व्यक्ति को सोचना है और निर्णय लेना है कि फाड़कर अलग करना है या सीकर मिलाना है।"[1]

सभ्यता के इतिहास की जिस चक्रीय प्रक्रिया से हम गुजर रहे हैं उसने हमें पुनः असनों में आरखड़े हुए है । जहां आदिम सभ्यता और स्थितियां आमने सामने हैं और संस्कार शीलता की पहली बुनियाद पड़नी आरम्भहो रही है । अन्तर केवल इतना है कि तब आदिम सभ्यता मनुष्य का रक्तपाती संघर्ष उसकी विपरीत प्राकृतिक स्थितियों और अस्तित्व की रक्षा के लिये था । वह सहज और निश्छल शिशु सा प्राकृतिक था । उसे भयानक और विद्रूप स्थितियों में ईश्वर ने धरती पर संघर्ष के लिये छोड़ा और उसने पूरी जीवटता से अपने पंख जमाये । आज की रक्तिम हिंसा में जिस भीषण

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 7.789 Volume 14-Issue 01, (January-March 2026)

विद्रूपता और अमानवीयता को हम देख रहे हैं । उसका जिम्मेदार आज का कथित सुसभ्य मनुष्य है जो इतिहास की सैद्धान्तिक प्रक्रिया में पूर्णरूपेण सभ्य माना जा चुका है जिसका चेहरा सलोना है और जो भीतर से और अधिक आदिम और खूंखार है जिसके मष्तिष्क में सह – अस्तित्व का प्रश्न ही नहीं है । बल्कि सह – अस्तित्व की भावना को तहस–नहस करके अपनी स्वार्थपूर्ति के लिये कुचक्र, षडयन्त्र, रक्तपात और नये नये नारे गढ़ कर पूरी मानव पीढ़ी को दिग्भ्रमित कर रहा है यह मनुष्य के भारत वर्ष का नहीं विश्व के किसी भी कोने का हो सकता है संत रविदास की वाणी को काल और स्थान की सीमाओं में न बांधकर उस परिप्रेक्ष्य में देखना होगा जहां मनुष्य सुसभ्य होने का ढोग रचकर अनाचार और विषमता की खाईयां बराबर खोदता चला आ रहा है । भारतीय संस्कृति का मूल इन खाईयों को पाटना है । काशी में जन्म तो घटना भर है, विश्व के इतिहास में सभ्यता के बाद जितनी उथल–पुथल हुई है उसी जटिलता में वैषम्य को पाटकर भारत के संत पुरुष समाज में एक ऐसी स्थिरता प्रदान करते हैं । जिसे याद संस्कार मानकर यदि आत्मस्थ किया जाये तो कभी कोई दरार या समस्या ही उत्पन्न नहीं होंगी, और मनुष्य के बीच की दूरियां मिट जायेंगी, इसी परम्परा में संत रविदास की वाणी उस धागे के समान हैं जो समाज के हृदय के तारों को एक–एक करके बुन देती है ।

पूरे विश्व में इस रक्तपात और हिंसा को रोकने की शुरुआत ही भारत वर्ष से हुई थी । पांचवी, छठीं शताब्दी में बुद्ध का करूणामय सन्देश और भगवान महावीर का अहिंसा के दर्शन पूरे विश्व की संस्कृति को एक सूत्र में जोड़ा है भारतीय संस्कृति और इतिहास की जड़ों में मानव हित, प्रेम और अहिंसा का यही बुनियादी दर्शन रहा है । प्रेम और भेदभाव की इस संस्कृति के आलोक – वृत्त में विश्व का इतिहास बराबर स्नान कर रहा है । परन्तु करुणा और प्रेम की इस मानवीय संस्कृति को विदेशी आक्रान्ताओं ने भारत की कमजोरी माना । परिणामस्वरूप भारत पर बराबर आक्रमण होते रहे । लूटपाट, हिंसा क्रूर शासन और दमन की हिंसक स्थितियां भारतीय इतिहास को रक्त–रजित करती रहीं । भारत के मुखमण्डल पर रक्त के इन छींटों को सन्तों की वाणी ने धोया । यह रक्त रंजित इतिहास अपने अवशेषों के साथ आज भी भारत में बराबर दिखाई देता है। राजनीतिक स्वार्थपरता, जातिवाद, सम्प्रदायवाद, भ्रष्टाचार, ऊंच–नीच, विदेशी षडयन्त्र, हिंसा, आज का जीवन दर्शन बना हुआ है । लोकतान्त्रिक भारत की

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 7.789 Volume 14-Issue 01, (January-March 2026)

राजनीतिक जातीय विद्वेष में आज बराबर सुलग रही है । मानवीय मूल्य ध्वस्त हो रहे हैं । समाज को बांट देने वाले तत्व देश के अन्दर और बाहर सक्रिय हैं । इस स्थिति में सन्तों की परम्परा आधुनिक सन्दर्भा में प्रासंगिक हो उठी है । सामाजिक संगठन और विशेषकर वर्णाश्रम व्यवस्था के रूढ सिद्धान्तों ने देश के ही अन्दर आज भी दबी कुचली जातियों का शोषण करके शताब्दियों से दमित शद्र जातियों को सामाजिक अलगाव की ओर धकेल रखा है । दमन का यह सिद्धान्त दबी कचली जातियों का शोषण बराबर कर रहा है । अन्तर यही है । कि पहले शूद्र जातियां ईश्वरीय आज्ञा मान कर माथा नीचा करके सदियों से इसे झेलती चली आ रही थीं परन्तु आज धर्म निरपेक्ष भारत में राजनीतिक घुसपैंठ ने इस मुद्दे को और विकृत कर दिया है । स्थिति और विकट हो गयी है । संत काव्य परम्परा के मध्ययुगीन सन्तों ने तत्कालीन सन्दर्भों में प्रेमभाव और भाईचारे का जो मानववादी सन्देश दिया था वह आज भी उतना ही मूल्यवान सार्थक व प्रासंगिक हो उठा है ।

इसका प्रमुख कारण यह है । कि उनकी वाणी में निहित मूल्य मानवीय शाश्वता की उस महागाथा को कहते हैं जहां मानवता सुरक्षित रह सकती है । बौद्धों की वाणी समय की शिला पर अपने विभिन्न रूपाकारों में ढलकर सन्तकाल में जिस रूप में प्रतिफलित हुई है उसके सन्तों का अपना अनुभव और दर्शन भी समाहित है उसमें उन शाश्वत मूल्यों की बात कही गयी है । जो प्रचलित परम्परा और कुरीतियों तथा आडम्बर का पूरी तरह शोध करते हैं । उनका प्रभाव और लोकप्रियता का कारण उनका व्यवहारिक दर्शन है जो किसी भी काल और परिस्थिति में अपनी सार्थकता सिद्ध करना है ।

रविदास की आलोकप्रज्ञा उस समय बड़ी करुणा और शान्ति से बहती रही जब मध्यकालीन भारत दार्शनिक मतवाद की उत्ताल तरंगों से आहत हो रहा था । द्वैतवाद, विशिष्टा द्वैतवाद, अद्वैतवाद, द्वैताद्वैतवाद, की खौफनाक लहरों में डूबते उवराते भारत को क्षणभर भी ठहराव नहीं मिला वहीं विषैली जड़ें आज भी भारत को अन्दरूनी तौर पर खोखला कर रही हैं । और विदेशी साये व्यापार भाषा और भौतिकवादी संस्कृति का प्रदूषण विभिन्न इलेक्ट्रोनिया मीडिया और चौनलों से बराबर बरस रहा है । इसके दुष्परिणाम हिंसा, रक्तपात, कृत्रिमता और वैषम्य के रूप में आज की नई पीढ़ी के रूप में सामने आ रहें है । कुल मिलाकर भारत का वही चेहरा कुछ और रंग बदल–बदल

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 7.789 Volume 14-Issue 01, (January-March 2026)

कर सामने आया है । हिन्दू–मुस्लिम सम्प्रदायवाद और जातीय वैषम्य के आधार पर बंटा हुआ लोकतंत्र धर्मनिरपेक्षता के नाम पर जिस अवमूल्यन की नींव गढ़ रहा है । उससे मानवता का चेहरा और अधिक विकृत होगा । रविदास का अध्यात्म दर्शन रामानन्द के विशिष्टाद्वैत लकीर से चलकर निकला अद्वैतवादी आत्मा परमात्मा के एकेश्वरवाद में ढलकर सामाजिक सरोकारों से जुड़ा रहा, यह वाद कहां से भारतीय दर्शन में एकेश्वर वाद की कल्पना शंकराचार्य के अद्वैतवादी दर्शन से अपनी या मुस्लिमों के सूफी दर्शन से चलकर संस्कृतिकरण की प्रक्रिया के आधार पर भारतीय दर्शनों से जुड़ी यह प्रश्न उतना महत्वपूर्ण नहीं है जितना कि इसकी मध्यकालीन परिस्थितियों में इसने जिस सामाजिक दायित्व का निर्वाह करते हुए जिस समानता व मानववाद का सन्देश दिया वह अधिक महत्वपूर्ण है । "इस प्रकार हिन्दू मुसलमानों की संस्कृति के मिश्रण से ईश्वर के इस रूप का प्रचार हुआ जो निराकार सर्वव्यापक और अखण्ड ज्योति स्वरूप है दोनों ही धर्मों में ग्राध्य ऐसे नवकल्पित ईश्वर के प्रति भक्तिभाव ही सन्त काव्य के रूप में उदित हुआ ।"[2]

सन्तकाव्य परम्परा को लगभग सभी ने कबीरदास, रविदास, दादू, पीपा मलूकदास, नानकदेव आदि सन्तों ने अपनी वाणी के आलोक से ऊंच–नीच, अस्पृश्यता, कर्मकाण्ड और पाखण्डों का विरोध कर समाज को एक ऐसी दिशा प्रदान की जिसके आलोक ने युगों युगों की काल सन्धि यों में छिपी सिपाही कलौंस को पौधकर एक अलौकिक आलोक का प्रसार किया सन्त रविदास की वाणी को हमें सामाजिक वैषम्य और आज की दलित जातियों ऊंच–नीच वर्णों में बटें समाज की भूमिका में रखकर देखना होगा क्योंकि रविदास स्वयं जिस वर्ण से उपजे थे व तत्कालीन समाज की निम्न और हेय चमार जाति थी उस समय के सवर्ण भक्तों जैसे गोस्वामी तुलसीदास को दूसरे ही प्रकार का संघर्ष झेलना पड़ा था वह था सगुण निर्गुण और शेववाद और शाक्तवाद का मतभेदवाद और उन्होंने राम के ईश्वरीय सगुण अवतार के लोकमर्यादित और लोक मंगलकारी चरित्र को प्रस्तुत कर समन्वयवादी भावना से भक्ति के क्षेत्र में आये विभाजन को पाटने में अदद की । निर्गुण सन्त कबीरदास का समाज के प्रति सुधार वाद का दृष्टिकोण था । जो उनकी वाणी और भाषा में प्रत्यक्ष रूप से झलकता है ।

उनका सुधारवाद तत्कालीन समाज को सुधारने में सफल रहा, कबीर दबंग थे इस रूप में उनकी वाणी ने क्रान्ति करके सामाजिक बदलाव की भूमिका अदा को इसी निर्गुण

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 7.789 Volume 14-Issue 01, (January-March 2026)

परम्परा की सशक्त कड़ी के रूप में रविदास की वाणी करुणा और शान्ति की ऐसी शीतल धारा में बहीं कि समाज उनके पद चिन्हों पर आज तक चल रहा है । यह अनुगमन और राजनीतिक था । आज की बटलती हुई जनतान्त्रिक स्थितियों में रविदास की वाणी और विचारों को सुनाने वाले राजनेताओं ने वर्ग विशेष को दिग्भ्रमित ही किया है। ऐसे में रविदास की वाणी का सही आकंलन आवश्यक है । ताकि उनका स्वाभाविक चरित्र समाज के पटल पर लाया जा सके । उनकी वाणी सर्वसाधारण के लिये है चाहे वह शूद्र हो या सवर्ण, पुरुष हो अथवा स्त्री, राजा हो अथवा भिखारी

"संत मत के प्रचारक अथवा सन्तकाव्य के रचयिता जितने कवि हैं । वे प्रायः सबके सब अनपढ़ हैं, शुद्र अथवा स्त्रियां हैं । उनमें दुष्कर ज्ञान के साधन के प्रति क्षमता अनुराग अथवा निष्ठा क्योंकर उत्पन्न हो गयी ...बात यह है कि चतुर्थ श्रेणी के लोगों को द्विजातियों ने मध्यकाल में दबाकर रखा । उनके लिये देवालय प्रवेश निषिद्ध कर दिया गया उन्हें अस्पृश्य बनाकर रखा । अतएव तथाकथित सवर्ण लोगों के प्रति जो उस काल के सवर्ण ज्ञान और आचार के स्वर से नीचे गिर चुके थे उनके मन में आक्रोश होना स्वाभाविक है ।"[3]

परन्तु यह कथन भ्रामक है । सन्त काव्य परम्परा पर आक्रोश और बदले की भावना तो उनकी सौदेश्यता पर प्रश्नचिन्ह बन सकती है । सन्तकाव्य परम्परा में यदि वाणी का ओज भी है तो केवल कबीर में उनकी वाणी की प्रखरता स्वाभाविक है, रूढ़ियों की काई को परम्परा से उतारने के लिये ओज भरी फक्कड़ वाणी ही सही थी । सन्त कवियों का स्वभाव ही निर्मल है, उनकी वाणी की तरल धारा मानवीय करूणा से पिघल कर बहती है । उन पर बदले की भावना व आक्रोश का आरोप लगाना दुराग्रह के अलावा कुछ नहीं उनके मर्म को समझने के लिऐ उतने ही बड़े मानवीय हृदय की आवश्यकता है जितने बडे स्वयं वे महामानव थे । प्रेम और मानवता की भाषा एक प्रेमी और सहृदय ही आत्मसात कर सकता है । सब प्रतिकारों को भुलाकर हरि का स्मरण करने वाले सन्त किस तरह किसी से प्रतिकार ले सकते हैं?

**"रविदास गति ने सोईये, दिवसन करिये स्वाद ।**
**अत निसदिन हरि जी सुमरिये छोड़ि सकल प्रतिवाद । ।"**[4]

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 7.789 Volume 14-Issue 01, (January-March 2026)

रविदास अपनी वस्तुस्थिति से अवगत हैं कि वे जूत्य गांठते हैं और निम्न जाति से है परन्तु उनके संस्कार विवेक सम्मत हैं और वे कार्य विभाजन के भेटों को पाटना चाहते हैं । इसके लिये उनके पास प्रभु स्मरण के अतिरिक्त कोई शैली नहीं है ।

**मेरी जाति कमीनी पाति कमीनी ओक्ष अनभुहमारा ।**
**तुम सरणागति राजा रामचन्द कहि रविदास चमारा । ।"[5]**

रविदास अपनी वाणी से वर्णाश्रम व्यवस्था से उपजी रेखायें तो पाटते है उनके दर्शन में इस्लामिक सिद्धांतों का स्वाभाविक समन्वय मिलता है, जो आज के सन्दर्भ में प्रासंगिक हैं सम्प्रदाय वाद की आग में जलता देश सन्तों की वाणी से सही दिशा ग्रहण कर सकता है भक्ति की यह ऐसी शैली है जहां ईश्वर की साधना जाति–पाति और वर्गवाद की दूरियों को मिटा सकती है । यह समन्वयवादी वाणी सप्रयास नहीं आत्मा की सहजता से शब्दों में उत्तरी है । मानवीय एकता का सहज संगीत मानवीय धरातल पर बहा दिया ।

**"अबरन बरन कंह ज्ञानी कोई ।**
**घर–घर व्यापि रहयो हरि सोई । ।"[6]**

राम कृष्ण करीम अवतार सब एक ही ईश्वर के रूप हैं ।

**"कृस्न करीम राम हरि राघव जब लग एक न पेरखा ।**
**भेद कतेष कुरान पुरान न सहज एक नहीं देखा । ।"[7]**

इस्लाम में जिस मानवता का सन्देश दिया जाता है उसे यदि सही ढग से लागू किया जाए तो सम्प्रदायवाद् के दुष्परिणामों को आज रोका जा सकता है । ईमान लाओं और नेक अमल करो । इस्लाम कीमती बुनियादी है । समस्त मानवों को नाना प्रकार के धार्मिक मतवाद से हटाकर केवल एक शक्ति अल्लाह की बन्दगी के कारण एक ही परिवार के सदस्यों की भाति भाई–भाई बन जाए ।"[8]

इस्लाम का मत एकत्ववाद भारतीय अद्वैतवादी दर्शन से मेल खाता है । "कबीर का घट–घट बासी वही परम ब्रह्म है जो मानव के हृदय में बसता है, चाहे वह किसी भी जाति या धर्म का हो ।"[9] उसके नाम अनेक हैं चाहे जिस नाम से उसे पुकारो वह इन्सान को पनाह देता है ।

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 7.789 Volume 14-Issue 01, (January-March 2026)

**"अलख अलह रवालिक खुदा क्रिस्न करीम करतार"**[10]

सन्त रविदास बराबर एकता पर बल देते रहें हैं जाति–पाति के भेदभाव मिटने आवश्यक हैं ब्राह्मण और चांडाल सब में एक ही ईश्वर का वास है,

**"ब्राह्मण अरू चंडालमाहि रविदास नहिं अन्तर जान ।**
**सब मेंहि एक ही जोति है सभ घट एक समान । ।"**[11]

जन्म से कोई नीच नहीं होता ऊंच–नीच की जातीय रुढ़ियों में फसील सामाजिक व्यवस्था आज भी इस कुरीति से छूट नहीं पायी है ।

**'रविदास जन्म के काटनै होत न कोऊ नीच ।**
**नर कू नीच करि डारि है औछे करम की कीच । ।"**[12]

मानव के बुरे करम ही उसे नीच बनाते हैं, ऊंची जाति में जन्म लेकर नीच कर्म करने वाला ऊंचा नहीं माना जा सकता । सन्त रविदास की इस वाणी में आज के समाज में व्याप्त बुराईयों की मुक्ति का सन्देश छिपा हुआ है । जिसे उनके ही अनुयायी नजर अन्दाज करके राजनीति मोहरों की तरह प्रयोग कर रहे हैं । आज सन्तों की वाणी का मर्म न समझने वाले प्रतिशोध और प्रतिकार की भावना से पीडित होकर वोट बटोरने की साजिशो में लगे हुए हैं । सत्यकर्म ही मनुष्य का सच्चा धर्म है रविदास यही कहते हैं–

**करम बन्धन में रमि रहयो फल की तज्यौ न आस ।**
**करम मनुष्य को धरम है सन्त भारतै रविदास । ।"**[13]

मानवीय एकता को प्रेम के धागे में पिरोकर हृदयों को जोड़ने वाले सन्त रविदास मानव को मानव से प्रेम करने की सीख देते हैं उस एक ईश्वर ने ही सबको उत्पन्न किया है फिर जाति पाति का भेट कैसा है जो मानवता को लीलता चला जा रहा है ।

**"जात पात के फर मंहि उरझि रहा सभ लोग ।**
**मानुषता को रत्रात हुई रविदास जात कर रोग । ।**[14]

रविदास में प्रताड़ना नहीं उलाहना है । वेद पढ़ पढ़ कर पंडित बने दमियों के प्रति उमड़ती व्यथा के पीछे नीची जाति को मिलने वाला दारूण कष्ट है:

**वेद पढ़ई पंडित बन्यो गांव पन्ही तउ चमार ।**
**रविदास मानुष इक हुई नाम घरै हई चार । ।**[15]

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 7.789 Volume 14-Issue 01, (January-March 2026)

रविदास की वाणादि ने बराबर जन कल्याण का सन्देश देती हुई एक सहज साधना पद्धति के रूप में सहज प्रभाव छोड़ा । संयम धैर्य और मानवीय करुणा के बल पर बड़ी बड़ी विभाजक रेवाओं को उन्होंने मिटाया उनका भावानुकूल भवबांध युगानुरूप है जिसे नये ढंग से समझने की आवश्यकता है । मध्य युग के सभी भक्ति साधकों ने अध्यात्म के स्तर पर सामाजिक समानता को प्राथमिकता दी और समतामूलक व्यवस्था की स्थापना का प्रयास किया" मार्क्स का विचार है कि धर्म दलित व्यक्तियों की अति है हृदय हीन जाति का हृदय है एवं आत्म रहित परिस्थितियों की आत्मा है ।"[16]

निर्गुण संत काव्य का आधार दर्शन प्रेम और मानव मूलक समता थी जो लोकाभिमुखी थी यह सत्य है कि भगवान के समुझा समस्त भक्त समान हैं परन्तु भक्तों ने जिस सम्प्रदायवाट के जहर को समाज की जड़ों में उड़ेला है उससे ही मानव की चेतना में विषमता पनपी है । जिन शास्त्रीय उलझनों में आज भक्ति भावना ग्रस्त दिखाई देती है उससे निकलने का रास्ता ही सन्तों ने सुझाया है । सन्तों की वाणी शास्त्र वाद नहीं अनुभव पर टिकी हुई है । उसमें लोक जीवन में आने वाली दिन प्रतिदिन की सामाजिक समस्याओं को उभार कर मुक्ति का उपाय बताया गया है इस काव्य में लोक मंगल और जीवन रक्षण जैसी भावना मूल हैं । सन्त रविदास बहुत ही विनम्र प्रकृति के सन्त थे सवर्ण और नीची दोनों ही जातियां इनका सम्मान करती थीं ।

**"भगवत कृपा प्रसाद परम गति इहि तन पाई ।**
**नाज सिंहासन बैठि जाति पर नीति दिखाई । ।"**[17]

वर्णाश्रम अभियान तजि पद रज बन्दहिजाजु की सन्त रविदास ने गृहस्थी का पालन करते हुए प्रभु भक्ति की इनके समग्र विनम्र व्यक्तित्व के निर्माण में इनकी पत्नी लोक का बहुत बड़ा योगदान था वह चिड़चिढ़ी नहीं बल्कि बहुत ही सन्तोषी स्वभाव की थी, वह रविदास के संगी साधुओं की बहुत आवभगत व सेवा करती थी । आर्थिक संकटों के बीच भी रविदास अपने उसी व्यवसाय से जुड़े रहे जिसमें नाममात्र की आमदनी होती थी । अपनी निर्धन स्थिति का उपहास ये नत होकर सुन लेते थे आज की पीढ़ी में वह धैर्य नहीं वह तो ऐश्वर्य की होड़ में मानवता को भुला बैठी है ।

**"दरिदु देख सभ को हंसे ऐसी दशा हमारी"**[18]

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 7.789 Volume 14-Issue 01, (January-March 2026)

सन्त रविदास का धार्मिक परविश बहुत ही जटिल था उत्थान – पतन के उस दौर में मानवता का ह्यास जिस ढंग से हो रहा था उसमें मनुष्य के हृदय में निराशा का आ जाना स्वाभाविक था कर्मकाण्ड के नाम पर भूत पिशाच तंत्र मंत्र पाखंड गृह साधना का प्रचार जोरों पर था मध्यकाल की संतकाव्य परम्परा ने इसका डटकर विरोध किया । धर्म के नाम पर समाजिक विकृतियों की कुचालों में उलझा समाज साम्प्रदायिक होने लगा था मूर्तिपूजा बहुदेववाद का विरोध कर संत एक नये समाज की नींव रख रहे थे । हजारों में पुरोहितों की संख्या धार्मिक खुराफातों में दिनरात समाज को उलझाये रखती थी उस समय रविदास ने मन को प्राथमिकता दी ।

**"मन ही पूजा मन ही धूप मन ही सहज सरूप पूजा अर्चा न जानूं तेरी ।"**[19]

उस काल में मन्दिर विलासिता के केन्द्र बन चुके थे । देवदासी प्रथा जिन आदर्शों से प्रारम्भ हुई वे समाप्त हो चुके थे अब वे प्रत्यक्ष रूप से वेश्यावृति करती थी और यह व्यभिचार मन्दिरों और भगवान की ओट में होने लगा था । सोमनाथ के मन्दिर में ही पांच सौ नर्तकियां थीं तीन सौ गायन वादन करने वाले थे । वादन करने वाले थे । मध्ययुग में अनेक अन्ध – विश्वासों को भी प्रत्यक्ष रूप से प्रश्रय मिला । कहीं मन्दिर के निकट रेंगने या टखनों के बल चलने की प्रथा थी । कहीं देवताओं के चिन्ह अंकित करने की प्रथा थी । कहीं तीर्थ जाते समय रतज की सुई से गाल और जिव्हा चिखाने की प्रथा थी कहीं नरबलि की ।"[20]

आज भी मन्दिरों में यही सब होता है । समाचार पत्रों में मन्दिरों और मठों में पनपते पापों का भंडाफोड़ आये दिन होता रहता था । सत्य, अहिंसा संयम, धैर्य, दया, परोपकार आदि को त्यागकर काम क्रोध मोह अंहकार का प्रकोप आज भी धार्मिक व्यवस्था पर हावी है । धर्म के बाह्य आचरण । के कारण असमानता की बढ़ती प्रवृत्ति पर तब सन्त रैदास ने जिस ढंग से रोक लगाई वह आज भी प्रासंगिक है ।

**"ब्राह्मण बैस सूद अरू खत्री ।**
**डोम चमार मन सोई । ।"**[21]

धर्म में विचार शून्यता उन दिनों भी थी आज भी है ।

रुढ़ियों और तंत्रमंत्र में जकडा समाज सत्य के आर – पार देखनें में आज भी असमर्थ है संत रविदास है ने जिस नये समाज के निर्माण की प्रेरणा दी उसमें गहरी

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 7.789 Volume 14-Issue 01, (January-March 2026)

मानवीय अनुभूति थी । रविदास के सामाजिक आदर्शों में किसी भी प्रकार की असमानता एवं असन्तुलन नहीं था । आज जिन आर्थिक विषमताओं की बात कही जाती है वह तो पुरातन वर्णाश्रम व्यवस्था की देन है । संविधान में दलितों के जिन आर्थिक अधिकारों की बात की गयी है । आज वह भी बेमानी लगती है मध्य युग के सन्तों में रैदास ने जिन आर्थिक विषमताओं का उल्लेख किया है उनकी व्याख्या भी आज गलत ढंग से प्रस्तुत की जा रही है । बौद्धिक परिचर्चाओं में एक अलग किस्म का वर्ग चर्चा पर हावी होता जा रहा है । साहित्य में राजनीति की इस गठबन्दी ने बड़ा अहित किया है । कम से कम साहित्य को इन सब बातों से बचना आवश्यक है ।

सन्त रविदास अपने समय की आर्थिक असमानता की परिस्थितियों से पूर्णत: परिचित थे और आर्थिक असमानता की प्रतिक्रिया स्वरूप उनके विचार उनके पदों में दिखाई देते हैं । इसके लिये उन्होंने स्वयं को ही आधार बनाकर लक्ष्य किया है और उस श्रम की महत्ता प्रतिपादित की जिसमें धर्म, संयम और आत्म गरिमा है । आज की लोक तान्त्रिक व्यवस्था में यह स्थिति भीख के रूप में व्यजित होती दीखती हैं । आरक्षण के नाम पर मिलने वाली सुविधाओं ने उसी भ्रम को आत्मग्लानि में बदल दिया है । सन्त रविदास के समय में भी लोग दरिद्रता का जीवन व्यतीत करते थे, परन्तु श्रम को नहीं भूलते थे ।

**"जोई जोई जोरियो सोई सोई फाटिओ ।**
**झूठे बनिज उठि गयी हारिओ । ।"**[22]
**"जिन जिड दिया सु हितकु अवरावै**
**सम घट भितरी हाट चलावै । ।"**[23]

आर्थिक असमानता और धार्मिक असमानता के बीच रविदास ने एक ऐसे सेतू का कार्य किया है जिस पर चलकर मानवता के पूर्णत्व तक पहुंचा जा सकता है । सन्त रविदास की नयी अवधारणाएं अनुकूलन का कार्य करती हैं । यदि कहीं करूणा में निर्भीकता देखनी है तो वह रैदास में ही देखी जा सकती है ।

**"जाकि छोटी जाति जाति केउ लागै ता' पर तु ही ढरै ।**
**नीच हुं ऊंच करै मेरा गोविन्द काहू ते न डरै । ।"**[24]

भक्ति से बड़ा कुछ भी नहीं है–

**"होई पुनीत भगवन्त भजन ते आपु तारि तारै कुल दोई ।**

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 7.789 Volume 14-Issue 01, (January-March 2026)

**धनि सुगांऊ धनि सुठांव धनि पुनीत कुटुम्ब सभ कोई । ।"**[25]

उनका मूर्ति विरोध तर्क पर भी आधारित है,

**"पाती तोई पूजि रचावै तारन तरन कहें रे ।**
**मूरत मांहि बसै परमेश्वर तो जल में क्यों तरै रे ।"**[26]

हृदय की सत्य भक्ति पर बल देकर रविदास ने परिमार्जन का रास्ता खोला,

**"थोथा पंडित थोथी बानी हरि बिन सबै कहानी ।"**[27]

**थोथा मन्दिर भोग विलासा थोथा आन देव की आसा"**[28]

चन्दन और पानी, चकोर और चांद, मोती और धागा के द्वारा जिस अद्वैत की सृष्टि संत रविदास ने की है वह अद्वैत वह दार्शनिकता के उस प्रदूषण से दूर है जिसमें उनकी सात्विकता के दर्शन होते हैं । निष्कर्ष में तत्कालीन सामाजिक परिस्थितियां सन्त रविदास के विचारों से प्रभावित थीं । संत रविदास का आर्विभाव ईसा की चौदहवीं शताब्दी में हुआ था । इस युग में इस्लाम की जड़ें गहराई तक भारत में फैल चुकी थीं । हिन्दू-धर्म अपना गौरव समाप्त करके धमन्धिता में खो चुका था । सामाजिक स्थितियां इतनी विषम थीं कि क्रान्ति की बात सोचना भी दूभर था । वर्णाश्रम व्यवस्था ने अस्पृश्यता को बढ़ावा देकर मनुष्य से मनुष्य की दूरी को और अधिक विस्तार दिया था । हिन्दु मुस्लिम सम्प्रदायों में बंटा भारत इस्लाम से आतंकित था ऐसी विकट स्थितियों में संत रैदास ने विश्व बन्धुत्व का संदेश दिया और अपनी सात्त्विक और संवेदनशील भक्ति की नयी अवधारणा स्थापित की जो मनुष्य से मनुष्य को जोड़ती है । रविदास की वाणी का अध्ययन करने पर हम पाते हैं कि उनके भक्तिपूर्ण पदों में तत्कालीन अव्यवस्था का ऐसा प्रतिबिम्ब हमारे सामने उभर कर आता है जो आज किसी भी स्थिति में अलग नहीं है । अन्तर केवल परिस्थितिओं और समय का है तब इतनी जटिलता नहीं थी आज की नयी सामाजिक परिभाषा में मानवता का जो चित्र अंकित है वह खण्ड-खण्ड होकर बिखरा हुआ दीखता है । मानव से मानव के इस संघर्ष की जड़ में वह भेदभाव है जिसे रैदास अन्त तक पाटने का प्रयास करते रहे । अन्याय और विषमता को हटाकर समन्व्य स्थापित करना ही रविदास की वाणी का मूल है । सत्य और भक्ति के बल पर ही मनुष्य समाज में सही ढंग से रहने का गुण सीखता है । गुरु रविदास की वाणी सह असित्त्व के सन्तुलन की वाणी है इसीलिये इसका

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 7.789 Volume 14-Issue 01, (January-March 2026)

सामयिक संदर्भों में वैचारिक मूल्य है । उनकी युगानुकूलता पर सन्देह करना जितना व्यर्थ है, उनकी वाणी में आक्रोश और बदले की भावना ढूंढना उतना ही बेमानी है ।

**"ऐसा चाहूं राज मैं जहां मिले सबको अन्न ।**
**छोटे बडों सब सभ बसै रविदास रहे प्रस्त । ।**

संत रैदास का प्रजातान्त्रिक दृष्टिकोण जितना उस समय सन्दर्भिति है उससे कहीं अधिक आज वह मूल्यवान है ।

**संदर्भ**

1. आनन्द, मीरा, समकालीन भारतीय साहित्य, अक्टूबर–दिसम्बर 1993 पृ० 65
2. डॉ० रामकुमार वर्मा, हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास चतुर्थ संस्करण, पृ० 192–93
3. डॉ० लक्ष्मी शंकर गुप्त, भक्ति काल का विकास, साहित्यिक निबन्ध, सम्पादन डॉट त्रिभुवन सिंह, पृ० 142
4. संत रविदास, योगेन्द्र सिंह पद पृ० 32
5. संत रविदास, गुरु ग्रंथ साहिब, पृ० 659
6. संत रैदास जी की वाणी, पृ० 10
7. संत रैदास जी की वाणी, पृ० 4
8. डॉ० सैयद आबिद हुसैन, कौमी तहजीब का मसला, पृ० 84
9. संत रविदास, रविदास वचन सुधा, डॉ० सरनदास भनोट, पृ० 144
10. वही, पृ० 56
11. वही, पृ० 129
12. रविदास, रविदास दर्शन, लेखक आचार्य पृथ्वी सिंह आजाद, पृ० 107
13. वही, पृ० 125
14. वही, पृ० 126
15. क्रिस्दोफिर कोडवेल, फारतर स्टील इन ए डाईम कल्चर, पृ० 75
16. नाभादास, भक्तमाल, पृ० 452
17. आदि गुरु ग्रंथ साहिब, पृ० 858.
18. संत सुधा सार, (सं० वियोगी हरि) संस्करण 1969, पद 14
19. डॉ० बाबू राव जोशी, सन्त काव्य में परोक्ष सत्ता का स्वरूप, 1969, पृ० 41

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 7.789 Volume 14-Issue 01, (January-March 2026)

20. आदि गुरु ग्रंथ साहिब वाणी रविदास भगत की, पृ० 858
21. आदि गुरु ग्रंथ साहिब, बानी रविदास भगत की, पृ० 1293–94
22. वही
23. वही पृ० 1106
24. वही, पृ० 858
25. संत रैदास, सं० योगेन्द्र सिंह 1972, पृ० 145
26. वही पृ० 167
27. सन्त रविदास दर्शन (सं० पृथ्वी सिंह आजाद 1972 साखी), पृ० 164–165